चिल्ड्रन प्रेस सर्विस बुलेटिन

वर्ष - २ | अंक - २ | पृष्ठ संख्या - १२ | प्रकाशनार्थ नई दिल्ली, फ़रवरी २००७

प्रधान संपादक
हसरत अर्जुमन्द

संपादक
आशेन्द्र सिंह

सलाहकार मंडल
के. कन्नन
गजेन्द्र नौटियाल
उमेश कुमार
बिभास
शैलेष

संपर्क पता
चिल्ड्रन प्रेस सर्विस बुलेटिन
c/o ग्रासरूट्स मीडिया इनीशियेटिव
प्रथम तल, रेल आरक्षण बिल्डिंग
५० ए, स्ट्रीट १७, ज़ाकिर नगर, ओखला
नई दिल्ली - ११० ०२५
दूरभाषः ०११-२६९८३४४६, २६९५५४५२,
०९८६८४६६४०१, ०९९९९०४२८९८
ई-मेलः grassrootsmediainitiative@gmail.com

ए.पी. ग्राफ़िक्स, टी-१६ ओखला फ़ेस-२
नई दिल्ली - ११० ०२० द्वारा मुद्रित

सीमित वितरण हेतु ::: मुद्रित प्रतियां-१०००

आइये हम भी यात्री बनें

बर्लिन में आयोजित 'इंटरनेशनल यूथ कांफ्रेंस ऑन जेंडर एण्ड डेवलपमेंट' में भारत का प्रतिनिधित्व करते हुए उत्तर प्रदेश के महराजगंज ज़िले की रजनी और जावेद ने विकास की अवधारणा में अपनी आवाज़ जोड़ी है। अंर्तराष्ट्रीय स्तर के इस आयोजन में इन दोनों ही बच्चों ने कहा कि लैंगिक असमानता को दूर किए बिना समग्र विकास संभव नहीं है।

दुनियां के ८ देशों से आए बच्चों ने इस आयोजन में अपनी बात रखकर एक नई पहल की है। अधिकारों की लड़ाई के लिए अब उस उम्र का इन्तज़ार नहीं किया जाना चाहिए जब हम मतदाता बनते हैं। यह मांग बाल अधिकारों से ही शुरू हो जानी चाहिए।

उधर राजस्थान के बीकानेर ज़िले की रुक्मणी कुमारी ने आपबीती का खुलासा करते हुए राजस्थान की उन तमाम बालिकाओं के रुदन को पाठकों के सामने रखा है जिन्हें विभिन्न कारणों के चलते बाल-विवाह का शिकार बना दिया जाता है। वहीं निठारी कांड के प्रति संवेदनशीलता का परिचय देते हुए प्रियंका ने पत्रकार बनने का मन बनाया है। बच्चों का कोमल मन केवल सामाजिक समस्याओं से ही आहत नहीं है अपितु वे ग्लोबल वार्मिंग जैसी पर्यावरणीय समस्याओं के प्रति भी चिन्तित हैं।

कोई भी परिवर्तन झटके में नहीं होता, बल्कि दूर कहीं से एक लहर उठती है जो धीरे-धीरे समग्र व सकारात्मक परिवर्तन का रूप ले लेती है। यही परिवर्तन विकास का संवाहक बनता है। तो आइये बच्चों द्वारा शुरू की गई विकास की इस यात्रा के हम और आप भी सहभागी बनें...

❑ *संपादक*

Plan
Be a part of it

लिंग आधारित समानता घर से शुरू हो

"अगर हम ऐसे समाज की कल्पना को साकार करना चाहते हैं जिसमें लिंग आधारित असतानता न हो और सभी को समान अधिकार मिलें, तो हमें इसकी शुरुआत अपने घर से ही करनी होगी", यह कहना है नेपाल के सीमावर्ती उत्तर प्रदेश के महराजगंज ज़िले के अंर्तगत आने वाले गांव गनवरिया (रतनपुर) की रजनी भारती का। १३ वर्षीय रजनी कक्षा ८ की छात्रा है। हाल ही में बर्लिन (जर्मनी) में आयोजित 'इंटरनेशनल यूथ कांफ्रेंस ऑन जेंडर एण्ड डेवलपमेंट' में रजनी ने अपने ज़िले के एक साथी मो. जावेद के साथ भारत का प्रतिनिधित्व किया।

रजनी ने बताया कि वे चार बहनें व दो भाई हैं। रजनी सबसे छोटी है। रजनी के पिता एक किसान हैं। नौतनवा ब्लॉक के अंर्तगत आने वाले रजनी के गांव में तथा आसपास के अन्य गांवों में ग्राम नियोजन केन्द्र नामक संस्था अंर्तराष्ट्रीय स्तर की संस्था प्लान के सहयोग से कार्य कर रही है। इस संस्था के तहत ग्राम स्तर पर बच्चों ने समूह बनाकर बाबू बहिनी मंच का गठन किया है। ज़िले भर में एक हज़ार से ज़्यादा बच्चे इन मंचों के माध्यम से जुड़े हैं। रजनी ने बताया कि वह ५वीं कक्षा से इस मंच से जुड़ी हुई है। नुक्कड़ नाटक तथा अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से लोगों को कन्या भ्रूण हत्या, अशिक्षा, बाल विवाह तथा लिंग आधारित भेदभाव के ख़िलाफ़ जागरूक कर रही है। बर्लिन के अपने अनुभवों को बताते हुए रजनी कहती है कि वहां उसने कई दर्शनीय स्थल देखे तथा राजनेताओं से मुलाक़ात कर अपने देश की समस्याओं एवं उनके समाधान के बारे में बात की। "हमनें वहां लिंग आधारित भेदभाव के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाई और कहा कि इस भेदभाव के ख़िलाफ़ सभी राष्ट्रों को एकजुट होना होगा।" रजनी ने कहा कि विभिन्न देशों से आए बच्चों से मिलकर उसे अच्छा लगा और उसने वहां जो कुछ भी सीखा उसे वह यहां अन्य लोगों को बताएगी। रजनी का कहना है, "अगर हम देश और समाज से लिंग आधारित असतानता दूर करना चाहते हैं तो हमें इसकी शुरुआत अपने ही घर से करनी होगी।" भविष्य में पढ़-लिख कर रजनी एक पायलेट अथवा पत्रकार बनना चाहती है।

१५ वर्षीय मो. जावेद त्रिलोकपुर पहुनी का रहने वाला है। ११वीं कक्षा के छात्र जावेद के घरवालों को जब यह पता चला कि संस्था की प्रक्रिया के तहत अंर्तराष्ट्रीय आयोजन में भाग लेने के लए जावेद का चुनाव बर्लिन जाने के लिए हुआ है तो पहले वे घबराए, बाद में सब सामान्य हो गया। जावेद कहता है, "मैं ६वीं कक्षा से बाबू बहिनी मंच से जुड़ा हुआ हूँ। इस मंच से जुड़ने के बाद हमें पहले तो हमारे शिक्षा, स्वास्थ्य व जीने के अधिकारों से परिचित कराया गया। उसके बाद हमारी हिचक निकालकर हमें अपनी आवाज़ रखने के लिए तैयार किया गया। हम मंच के साथियों के साथ गांव में जाते व जो हमें बताया जाता वह हम गांव वालों को भी बताते। हम गांव में कई ऐसे आयोजन करते जिसके तहत लड़कों का काम लड़कियां करतीं व लड़कियों का काम जैसे खाना पकाना, बर्तन साफ़ करना, आदि, लड़के करते। बर्लिन यात्रा मेरे जीवन की एक उपलब्धि है। अब तक हम जो बात अपने घर, मोहल्ले या गांव में कहते थे वहीं बात हमें अंर्तराष्ट्रीय स्तर के मंच से कहने का मौक़ा मिला। इस आयोजन में कोलम्बिया, पैराग्वे, नार्वे, जर्मनी सहित आठ देशों के दो दर्जन से अधिक बच्चों ने भाग लिया। मुझे बर्लिन के लोगों की ईमानदारी, सहयोग की भावना व मेहमान नवाज़ी ने बहुत प्रभावित किया।"

जावेद का सपना है कि वह भविष्य में एक कुशल डॉक्टर या इंजीनियर बने। वह कहता है कि लिंग आधारित या जाति व सम्प्रदाय आधारित भेदभाव को समाज से दूर करने के लिए हमें सामूहिकता के साथ काम करना होगा।

● **चिप्रेस**

नोटः इस सामग्री का उपयोग होने पर प्रकाशित कतरन कृपया अवश्य भेजें । फोटो के लिए कृपया ई-मेल पर संपर्क करें ।

* जैसा उन्होने **आशेन्द्र** को बताया।

रेगिस्तान में जीवन

❑ *मांगीलाल खुडिया*

हिंदी सिनेमा से लेकर अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक के सिनेमा में राजस्थान के रेगिस्तान, हवेलियों और महलों का चित्रांकन बहुत ही ख़ूबसूरती के साथ किया गया है। जैसा कि नाम से ही प्रतीत होता है कि यह प्रदेश राजा-महाराजाओं का प्रदेश रहा है। दुनिया भर के सैलानी आज भी राजस्थान में आकर महीनों रहते हैं और यहां के रहन-सहन से लेकर संस्कृति और जुड़े पहलुओं पर शोध करते हैं व उसका लुत्फ़ उठाते हैं। भारत के अन्य राज्यों की तरह ही राजस्थन के लोगों का मुख्य व्यवसास कृषि है। यहां के किसान और अकाल का चोली दामन का साथ है। आये साल पड़ने वाले अकाल के फलस्वरूप पलायन करना यहां के किसानों की नियति बन गई है। ये पलायन एक तरफ़ जहां किसानों के सामाजिक विकास में बाधक बनता है, वहीं दूसरी ओर उनके बच्चों को शिक्षा व स्वास्थ्य जैसी मौलिक सुविधाओं से भी वंचित रखता है। राजस्थान की अधिकांश भूमि रेगिस्तान है, कुछ ज़मीन उपजाऊ है भी तो वर्षा के अभाव में यहां हर एक-दो साल बाद अकाल किसानों को औद्योगिक क्षेत्रों में मज़दूर बनने के लिए विवश कर देता है। जबकि इस अकाल में हज़ारों जानवर काल के ग्रास बन जाते हैं।

रेगिस्तान के लोगों का जीवन दूर से भले ही रेत की तरह चमकीला लगता हो, लेकिन यह पूरी तरह नीरस और सूखा है। यहां के लोगों के सिर पर बंधी आकर्षक चुनरी पगड़ी हमारी आंखों को आकर्षित करती है, लेकिन उनका जीवन उतना ही बेरंग है। घूमर नृत्य और ढ़ोल की थाप में हज़ारों बाल विवाहित कन्याओं का रुदन खो जाता है। हज़ारों बच्चों की तेज़ चलती सांसें गौण हो जाती हैं। ऊंची-ऊंची हवेलियां और महलों पर टिकी निगाहें बंजारों के फटे व नंगे पैरों की तरफ़ नहीं जातीं। जी हां, ये हैं रेगिस्तान की ज़िन्दगी के दो पहलू।

राजस्थान में पिछले लगभग ५-६ वर्षों से लगातार अकाल की स्थिति बनी हुई है। फलस्वरूप अधिकांश किसान पंजाब व अन्य सीमावर्ती राज्यों में मज़दूरी की तलाश में पलायन कर जाते हैं। पंजाब के लिए किसान फ़सल की कटाई के समय पलायन करते हैं, जबकि गुजरात के औद्योगिक क्षेत्रों में काम करते जाते हैं। बीकानेर ज़िले के मकड़ासर गांव के किसान नेनुराम मेघवाल के अनुसार अधिकांश गांवों में पेयजल की समस्या बारह महीनों विकराल बनी रहती है। लोग ५ किमी तक से पीने का पानी लाते हैं। इसके अलावा समय-समय पर चलने वाली रेगिस्तानी आंधी व तूफ़ान लोगों का जीवन प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं।

रेगिस्तान के जीवन की एक और समस्या है, और वह है यहां पाए जाने वाले सांप व कई रेगिस्तानी ज़हरीले जानवर। इन जानवरों के काटने से आए दिन बच्चों व जानवरों की मौत होती रहती है। रेगिस्तान में सुदूर बसे गांवों में आज भी जाति-आधारित भेदभाव व्याप्त है। लोगों की की कई पुश्तें एक ही काम करती चली आ रही हैं। यह प्रथा अशिक्षा व बाल मज़दूरी तथा बाल-विवाह जैसी बुराइयों की भी जनक हैं। राजस्थान के रेगिस्तानी क्षेत्रों में आज भी बालिका शिक्षा के प्रति लोगों में जागरूकता नहीं आ पाई है। अक्सर लड़कियां या तो पढ़ती ही नहीं हैं अथवा एक-दो कक्षा पढ़कर पढ़ना छोड़ देती हैं। गत एक दशक में स्थिति में आंशिक सुधार की शुरुआत हुई है। बालिका शिक्षा और स्वास्थ्य जैसे अधिकारों की चर्चा ने गर्माहट पकड़ी है। बाल-विवाह का प्रचलन भी कुछ हद तक कम हुआ है, लेकिन ये सारे बदलाव शहरी या क़सबाई क्षेत्रों में ही हुए हैं। सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों का जीवन अभी भी जस का तस है।

● चिप्रेस

नोटः इस सामग्री का उपयोग होने पर प्रकाशित कतरन कृपया अवश्य भेजें । फोटो के लिए कृपया ई-मेल पर संपर्क करें ।

* *मांगीलाल खुडिया* बीकानेर ज़िले की कोलायत तहसील के दियातरा गांव का निवासी है और कक्षा ६ का छात्र है।

मृत्युभोज एक सामाजिक अभिशाप

भंवरलाल

मृत्युभोज एक ऐसी प्रथा है जिसने हमारे समाज में कई तरह के अंधविश्वास और रूढ़ियों को जन्म दिया है। राजस्थान भी इनसे अछूता नहीं है। राजस्थान के कुछ युवाओं से जब बात की गई तो उन्होनें मृत्युभोज को ग़लत व समाज को कमज़ोर बनाने वाला बताया; जबकि कुछ बुज़ुर्ग लोगों की इसके पीछे अपनी मान्यताएं हैं।

बीकानेर जिले के लूनकरणसर निवासी युवा सोहनलाल मृत्युभोज के सख़्त ख़िलाफ़ हैं। इनका मत है कि यह प्रथा जल्द से जल्द बंद होनी चाहिए। जिस व्यक्ति की मृत्यु होती है उसके परिजनों का पहले से ही काफ़ी रुपया उसके इलाज में लग चुका होता है। यदि वह सामान्य मृत्यु भी है तो जन क्षति तो हुई ही। ऊपर से मृत्युभोज का ख़र्चा। सोहनलाल का कहना है कि यह एक तरह का पाखण्ड है जिसमें ग़रीब और ज़्यादा ग़रीब बनता जाता है। यहीं की एक महिला विमला देवी का कहना है, “हम एक सामाजिक प्राणी हैं। समाज में जब किसी के यहां किसी की मृत्यु हो जाती है तो हम मृत्युभोज में जाते हैं। इसी तरह हमें भी मृत्युभोज कराना पड़ता है। अपनी नाक बचाने और लोगों का ताना न सुनने के लिए यह करना पड़ता है।” विमला देवी मृत्युभोज को ग़लत मानती हैं, लेकिन उनका कहना है कि वह अकेली कर भी क्या सकती है।

राजस्थान में महिला की मृत्यु होने पर उसका मृत्युभोज ग्यारहवें दिन किया जाना है और पुरूष का मृत्युभोज बारहवें दिन किया जाता है। सुनीता देवी ने बताया कि अगर मृतक महिला का पति ज़िन्दा है तब उसका मृत्युभोज ग्यारहवें दिन किया जाता है। सुनीता ने यह भी बताया कि जब महिला के पति की मृत्यु हो जाती है तो महिला घर से बाहर नहीं निकलती। फिर उसके भाई उसके मायके ले जाते हैं। उसके बाद उसका घर से निकलना शुरू होता है। ५० वर्षीय मोड़ूराम का कहना है कि शास्त्रों के अनुसार मृत्यु के पश्चात जो भोज व धर्म किया जाता है वह मृतक को मिलता है।

मृत्युभोज के साथ कई तरह की धारणाएं जुड़ी हुई हैं। बकखूरत निवासी मोडाराम के अनुसार मृत्युभोज मृतक की आत्मा को मोक्ष दिलाने के लिए कराया जाता है। इसके पीछे प्रचलित एक कथा के अनुसार राजा कर्ण बहुत दानवीर था। अपने ज़िंदा रहते उसने लोगों को दान में खूब सारा सोना दिया। मृत्यु के उपरांत जब राजा कर्ण यमलोक पहुंचे तो उन्होने वहां भोजन की मांग की। उनके सामने सोना लाकर रख दिया गया। राजा कर्ण ने कहा, “मुझे भूख लगी है, अतः मुझे भोजन चाहिए। मैं इस सोने का क्या करूं?” इस पर भगवान ने राजा कर्ण से कहा, “तुमने तो उम्र भर सोना ही दान किया है। अतः यह सोना ही तुम्हें खाना पड़ेगा।” राजा कर्ण के आग्रह पर भगवान ने उन्हे पुनः मृत्युलोक भेजा। राजा कर्ण इस दौरान सोलह दिन तक मृत्युलोक में रुके। इस काल को श्राद्ध काल भी कहा जाता है। यह काल आश्विन माह के शुक्ल पक्ष में होता है। मृत्युभोज से जुड़ी एक और मान्यता का ज़िक्र करते हुए दासौड़ी गांव के पीराराम कहते हैं कि जब कोई बुज़ुर्ग अपने जीवन की अंतिम अवस्था में होता है तो उसके घर वाले उसे आश्वासन देते हैं कि वह अपने शरीर को शांत करले। व्यक्ति की मृत्यु के बारहवें दिन मृत्युभोज के साथ ही घर की सबसे छोटी लड़की की शादी कर दी जाती है। उसकी उम्र चाहे जितनी हो। इसे धर्म विवाह कहा जाता है। यह एक तरह का अंध विश्वास है।

अगर किसी किशोर या प्रौढ़ की मृत्यु सामान्य रूप से अथवा बीमारी या किसी दुर्घटना में होती है तो उसकी पूजा भूत-प्रेत के रूप में की जाती है। मृत्युभोज के नाम पर होने वाले अनावश्यक ख़र्चे के कुछ लोग विरोध में भी रहते हैं, लेकिन ऐसे लोगों की संख्या कम ही है।

सोहनवाली ढ़ाणीयों नामक गांव में लगभग २० युवाओं ने मिलकर एक संगठन बनाया है। संगठन के सदस्य भागीरथ का कहना है कि वे लोग मृत्युभोज में शामिल नहीं होते और लोगों को समझा देते हैं कि वो इसे बंद करें। कालू गांव की मुस्लिम समाज की महिला सुगरा देवी का कहना है कि पहले हमारे यहां चालीसवां हुआ करता था। इसके तहत चालीस दिन तक समाज के लोगों को चावल, शक्कर व देशी घी खिलाना पड़ता था। अब यह आयोजन मात्र सत्रह दिन का ही होता है।

ओम प्रकाश वर्मा का कहना है कि यह ऐसा अभिशाप है जो ग़रीब को और ग़रीब तथा क़र्ज़वान बनाता है। धर्म और अंधविश्वास के नाम पर इस प्रथा को लगातार बढ़ावा मिल रहा है। अतः युवााओं को आगे आकर इसे बंद कराना होगा।

● चिप्रेस

नोटः इस सामग्री का उपयोग होने पर प्रकाशित कतरन कृपया अवश्य भेजें । फोटो के लिए कृपया ई-मेल पर संपर्क करें ।

* *भंवरलाल* बीकानेर ज़िले की कोलायत तहसील के हंदा गांव के रहने वाले हैं।

१८ की हो बिंदणी, २१ का हो मोटियार

❑ *रुक्मणी कुमारी*

"बाबुल छोटी सी बमर मे परणाइयो मत ना,
म्हारी ज़िन्दगानी रे कोड़ लगाइयो मत ना।"

यह दुख राजस्थान की हर उस लड़की का है जिसकी शादी छोटी उम्र में कर दी जाती है। वह अपने पिता से इस गीत के माध्यम से कहती है कि बाबुल उसकी शादी छोटी उम्र में मत करो; उसकी ज़िंदगी में कोढ़ का रोग मत लगाओ।

राजस्थान के बीकानेर, चुरू, कोलसयत जैसे कई ज़िले व विकासखण्ड हैं जहां पर आज भी बाल-विवाह का प्रचलन है। यहां लड़कियों की शादी काफ़ी कम उम्र में कर दी जाती है और उन्हें ससुराल भेज दिया जाता है। छोटी उम्र में शादी होने से लड़कियां जल्दी गर्भवती हो जाती हैं। फलस्वरूप उन्हें कई प्रकार के रोगों को सामना करना पड़ता है। साथ ही जच्चा और बच्चा की जान को ख़तरा भी पैदा हो जाता है।

"मेरी शादी ८ वर्ष की उम्र में कर दी गई थी। तब मुझे शादी के मायने भी मालूम नहीं थे। आज मैं कक्षा ११वीं में पढ़ती हूँ लेकिन यहां तक पढ़ने के लिए मुझे कितने संघर्षो का सामना करना पड़ा है। यह सिर्फ़ मैं या हमारे प्रदेश की लड़कियां ही जान सकती हैं। मैं आगे और पढ़ना चाहती हूँ और कुछ बनना चाहती हूँ। बाल-विवाह का प्रचलन ग्रामीण क्षेत्रों में ज़्यादा है। सरकार ने क़ानून बना रखे हैं कि शादी के समय बिंदणी (लड़की) की उम्र १८ वर्ष और मोटियार (लड़का) की उम्र २१ वर्ष की होनी चाहिए। लेकिन इसका पालन कहां हो रहा है? मेरी शादी तो मात्र ८ साल की उम्र में ही कर दी गई।" बीकानेर ज़िले के अन्तर्गत आने वाले गांव भाणसर के कालूराम का कहना है कि हमारे गांव में ८० फ़ीसदी लड़कियों की शादी ६-१३ वर्ष के दौरान कर दी जाती है। कालूराम का कहना है कि हमारे गांव में लड़की १० वर्ष की हुई नहीं कि माता-पिता उसे बोझ मानकर शादी की बात शुरू कर देते हैं। जल्दी शादी और कम उम्र में मां बनने से गांव की कई लड़कियों की असमय मृत्यु भी हो चुकी है। समस्या सिर्फ़ कम उम्र में शादी करने तक की ही नहीं है, इससे जुड़े कई और पहलू भी हैं जैसे लाखों का दहेज व अट्टा-सट्टा आदि। अट्टा-सट्टा एक ऐसी प्रथा है जिसमें लड़की की अदला-बदली की जाती है। इसके तहत लड़की व लड़के की उम्र का तालमेल होना कोई मायने नहीं रखता।

"मायड़ म्हारी गुड़िया थार घर रे गई,
लिखी म्हार करमा जो-जो म्हार संग रे गई।"

राजस्थान में बाल-विवाह को अधिकांश लड़कियों ने अपना करम मान लिया है। गीत की उक्त पंक्तियों में एक लड़की कह रही है कि मेरी जो गुड़िया थी वह आपके ही घर रह गई। हां! शादी के बाद मेरी क़िस्मत में जो है वह मेरे संग आ गया है।

बीकानेर ज़िले के अन्तर्गत आने वाले केला गांव की सुनीता की शादी भी १० वर्ष की उम्र में कर दी गई थी। सुनीता का कहना है कि हमारे गांव में कई ऐसी घटनाएं घटी हैं जिसमें ग़रीब मां-बाप ने शादी के बहाने अपनी कम उम्र की लड़की को बेच दिया और बदले में लड़के वाले से अच्छी ख़ासी रक़म वसूल ली।

उरमूल सेतु संस्थान, लुणकरनसर, बीकानेर ने बालिकाओं को शिक्षित करने के लिए बालिका शिविर लगाना शुरू किया है। फलस्वरूप क्षेत्र की लड़कियों को औपचारिक व अनौपचारिक रूप से शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिल रहा है। लड़कियों में बढ़ते शिक्षा के स्तर ने उन्हें आत्मनिर्भर तो बनाया ही है, साथ ही अब वे जागरूक होकर बाल-विवाह जैसी प्रथाओं पर भी चर्चा करने लगी हैं। बाल विवाह को रोकने के लिए कुछ पढ़े-लिखे लोग और ग़ैर-सरकारी व सरकारी संगठन पंचायतों के माध्यम से गांवों में जागरूकता फैलाने का काम कर रहे हैं।

● **चिप्रेस**

नोटः इस सामग्री का उपयोग होने पर प्रकाशित कतरन कृपया अवश्य भेजें । फोटो के लिए कृपया ई-मेल पर संपर्क करें ।

* *रुक्मणी कुमारी* ११वीं कक्षा की छात्रा है और बीकानेर ज़िले के पूर्व एस.एस. गांव की रहने वाली है।

मैं स्कूल नहीं जाऊंगा

❑ dey jkekor o fcTt/ d/ekjh

“.....नहीं, मैं स्कूल नहीं जाऊंगा, वहां मास्साब बहुत मारते हैं।” यह कथन है राजस्थान के बीकानेर ज़िले के ७वीं कक्षा में पढ़ने वाले एक विद्यार्थी का। राजस्थान के स्कूलों ख़ासकर सरकारी स्कूलों में शिक्षकों द्वारा छात्रों की पिटाई करने की घटनाएं लगातार बढ़ती जा रही हैं। फलस्वरूप कई बच्चे या तो बीच में ही अपनी पढ़ाई छोड़ देते हैं अथवा कुछ शिक्षकों द्वारा दिए जाने वाले दण्ड से भयभीत होकर नियमित स्कूल नहीं जाते।

बीकानेर ज़िले के कैला गांव के रहने वाले कक्षा ८ के छात्र रमज़ान अली बताते हैं, “हमारे गांव में गत वर्ष स्कूल में विलम्ब से आने के कारण गुरू जी ने एक लड़के को मुर्ग़ा बना दिया। मुर्ग़ा बनने में लड़के को लगभग पौने एक घंटे तक झुककर अपने दोनों पैरों के नीचे से हाथ निकाल कर कान पकड़े रहना पड़ा। जब गुरू जी उसे खड़े होने को कहा तो वह ठीक से खड़ा नहीं हो सका। इस पर उसकी और ज़्यादा पिटाई लगाई गई। अंततः उस लड़के ने स्कूल जाना छोड़ दिया।

स्कूल में शिक्षकों द्वारा अमानवीय ढंग से दिए गए दण्ड की शिकायत छात्र घर पर भी नहीं कर सकते, अन्यथा घर वाले उनकी और पिटाई लगाते हैं। उन्हें लगता है कि विद्यालय में शिक्षक अपनी जगह सही हैं। इसी तरह छत्तरगढ़ के एक विद्यालय में शिक्षक ने एक छात्र की इस तरह पिटाई की कि छात्र के गाल में शिक्षक की घड़ी का कांच टूट कर घुस गया। फलस्वरूप वह बुरी तरह ज़ख़्मी हो गया। बाद में गांव के कुछ लोगों ने मिल कर अध्यापक को रस्सी से बांधकर पीटा और स्कूल का माहौल ख़राब हो गया। स्कूल में छात्रों को और भी कई तरह से दण्डित किया जाता है जैसे उनकी अंगुलियों के बीच क़लम फंसाकर दण्ड देना; लातें, घूंसे मारना, अपशब्दों का प्रयोग करना, मुर्ग़ा बनाना। वहीं छात्राओं को हाथ ऊपर कर खड़े रहकर व कक्षा से बाहर निकालकर दण्डित किया जाता है।

बीकानेर ज़िले के गिरजासर गांव में एक प्राइवेट स्कूल में दण्ड के दौरान शिक्षक ने छात्र का कान इस तरह खींचा कि उसकी हड्डियां टूट गईं व कान के इलाज में ५-६ हज़ार रुपये का ख़र्चा आया। इस घटना के बाद अध्यापक ने स्कूल छोड़ दिया व कुछ दिन बाद स्कूल बंद हो गया। एक अन्य घटना में शिक्षक ने छात्र को छड़ी से इस तरह मारा कि कलाई के ऊपर से उसके हाथ की हड्डी ही क्रेक हो गयी। अध्यापकों द्वारा छात्रों को दण्डित करने के मुख्य कारणों में छात्रों का स्कूल समय से न आना, ड्रेस में न आना, गृहकार्य पूरा करके न लाना, नाख़ून बड़े होना, आदि हैं। इसके अतिरिक्त विद्यालयों में साप्ताहिक परख ली जाती है। इसमें जिस बच्चे के नम्बर कम आते हैं उसे दण्डित किया जाता है। बीकानेर ज़िले का ही एक गांव है दियातरा। यहां बच्चों को दण्डस्वरूप मारा पीटा नहीं जाता बल्कि उनसे आर्थिक दण्ड वसूला जाता है। इसके तहत इकट्ठी हुई राशि से शिक्षक चाय आदि पीते हैं।

राजस्थान में शिक्षा का स्तर पहले से ही काफ़ी कम है। ऊपर से शिक्षकों द्वारा छात्रों की छोटी-छोटी ग़लतियों पर इस तरह दण्डित करना शिक्षा के स्तर को और कम कर रहा है। शिक्षक स्कूलों में स्वयं तो धूम्रपान करते हैं, लेकिन अगर किसी छात्र के बारे मे इस तरह की शिकायत मिलती है तो उसे दण्डित किया जाता है। राजस्थान भी शिक्षा की दृष्टि से एक विकसित राज्य बन सके इसके लिए शिक्षकों को चाहिए कि वे छात्रों के साथ सकारात्मक व्यवहार रखें।

● चिप्रेस

नोटः इस सामग्री का उपयोग होने पर प्रकाशित कतरन कृपया अवश्य भेजें । फोटो के लिए कृपया ई-मेल पर संपर्क करें ।

* *कमल रामावत* बीकानेर ज़िले के गिराजसर गांव के रहने वाले हैं व कक्षा ६ के छात्र हैं। *बिज्जु कुमारी* कक्षा १० की छात्रा है व बीकानेर ज़िले के सोढ़वाली गांव की रहने वाली है ।

यह कैसी धूम ?

❑ *चंदन कुमार*

सड़क दुर्घटना में मोटर साइकिल सवार की दर्दनाक मौत, बाइक चालक को ट्रक ने कुचला, बाइक चालक ने मासूम की जान ली। ये वो शीर्षक हैं जो हमें प्रतिदिन अख़बार में एक-दो स्थानों पर पढ़ने को मिल ही जाते हैं। हम इस तरह की ख़बरों के इतने आदी हो गए हैं कि उनके शीर्षक पर एक नज़र डाल कर आगे बढ़ जाते हैं। बहुत ज़्यादा हुआ तो ट्रैफ़िक व्यवस्था को कोसते हुए अख़बार का पन्ना पलट देते हैं। क्या हम दिन-ब-दिन असंवेदनहीन होते जा रहे है? यह एक यक्ष प्रश्न है।

सड़क पर अनियंत्रित गति से दौड़ती मोटर साइकिलें जिन्हें अब सिर्फ़ बाइक के नाम से जाना जाता है प्रतिदिन क़स्बाई क्षेत्रों से लेकर महानगरों तक में सैकड़ों लोगों को काल का ग्रास बनाती हैं। यह बात अलग है कि कहीं पर बाइक चालक स्वयं काल के ग्रास बनते हैं तो कहीं किसी बेक़सूर को बनाते हैं। महानगरों की पतली सड़कों पर कानों में एफ़ एम रेडियो अथवा मोबाइल फ़ोन का इयर फ़ोन लगाए अपनी मस्ती में मस्त युवा सहज ही देखने को मिल जाते हैं। उन्हें न पीछे आ रहे वाहन की सुध रहती है, ना आगे जा रहे पैदल व्यक्ति की फ़िक्र। बस धूम की धुन में वे मस्त हुए चले जाते हैं।

गत दिनों राजधानी दिल्ली में मोटरबाइकर्स की एक बड़ी सभा (मीट) हुई जिसमें युवकों ने अलग-अलग व ख़तरनाक करतब दिखाए। इसमें से अधिकांश करतब हाल ही में रिलीज हुई फ़िल्मों से प्रेरित थे। इस मीट में मोटरबाइकर्स द्वारा दिखाए गए करतबों से एक बात तो स्पष्ट हो गई कि बाइक चलाने वाले अधिकांश युवा हिन्दी फ़िल्मों के हीरो से स्वयं को कम नहीं समझते। अब ये बात अलग है कि इस दौरान कई मौत की नींद सो जाते हैं तो कई हाथ-पैर गंवा बैठते हैं।

आजकल मोटर साइकल रेस के बड़े-बड़े आयोजन होते हैं जिन्हें राष्ट्रीय से लेकर अंर्तराष्ट्रीय स्तर की कंपनियां प्रायोजित करती हैं। ग्लैमर की इस दुनियां ने मोटर साइकल के बाज़ार को भी ऊंचाइयां प्रदान की हैं। बाइक से हैरतअंगेज़ कारनामे दिखाने के पीछे गर्लफ्रैण्ड को इम्प्रेस करना भी एक पक्ष है। इसी प्रयास में कभी आगे का पहिया उठाकर बाइक चलाई जाती है तो कभी पीछे का पहिया उठाकर। इतना ही नहीं युवकों द्वारा भीड़-भाड़ वाले क्षेत्र में भी तीव्र गति से बाइक का चलाना कई दुर्घटनाओं को अंजाम देता है। वहीं युवकों में ट्रैफ़िक सिग्नल्स को तोड़ने की तो जैसे होड़ लगी रहती है। शराब पीकर बाइक चलाना या सिगरेट पीते हुए धुएं के छल्ले बनाकर गाड़ी दौड़ाना और हैंडिल छोड़ कर बाइक चलाना युवकों की आम प्रवृत्ति है।

आज बाज़ार में हर व्यक्ति की हैसियत के हिसाब से बाइक मौजूद है। जो ३५ हज़ार से शुरु होकर ६ करोड़ तक। बाज़ार में यमाहा की सबसे महंगी रेस बाइक एक्स-६०० है जिसकी क़ीमत ६ करोड़ रुपये है। बाज़ार में एक से एक आधुनिक मॉडल और तीव्र हॉर्न वाली बाइक लाने से पहले उत्पादक कम्पनियों को भी क़ानून के दायरे में लाना होगा ताकि वे निर्धारित मानदण्डों का पालन करें।

● **चिप्रेस**

नोटः इस सामग्री का उपयोग होने पर प्रकाशित कतरन कृपया अवश्य भेजें । फोटो के लिए कृपया ई-मेल पर संपर्क करें ।

* *चंदन कुमार* दिल्ली के संगम विहार क्षेत्र के रहने वाला है और कक्षा ११ का छात्र है।

कैसे बना कलेन्डर

❑ *जयकान्त कुमार*

तारीख़ जानना हो या उस तारीख़ को पड़ने वाला दिन अथवा महीना। इसके लिए हम सब को अपने घर की दीवार पर टंगे कलेंडर की सहायता लेनी पड़ती है। कहने का मतलब कि कलेंडर एक ऐसी उपयोगी वस्तु है जिसकी ज़रूरत हम सब को रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में पड़ती ही है। क्या हमने और आपने सोचा है कि बाज़ार में मिलने वाले एक से एक ख़ूबसूरत कलेंडर आख़िर बने कैसे? असल में इसकी भी एक दिलचस्प कहानी है।

कलेंडर का विकास अलग-अलग देशों में अलग-अलग तरीक़े से हुआ। प्रत्येक देश में प्रचलित कलेंडर उस देश की तत्कालीन आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का द्योतक रहा है। दुनियां में सबसे पहला प्रचलित कलेंडर ग्रीगेरियन कलेंडर है। यह कलेंडर जूलियन कलेंडर पर आधारित है। इसकी स्थापना ४६ ई. पूर्व जूलियस सीज़र ने की थी। एक मिस्री खगोल शास्त्री ने इस कलेंडर को सौर वर्ष के अनुसार ठीक करने के लिए इसे ४४५ दिन का बना दिया। इस बीच कलेंडर की दुनियां में कई उतार चढ़ाव आए और अंततः वर्ष को ३६५ दिन का कर दिया। इसके बाद प्रक्रिया शुरू हुई साल को महीनों में बांटने की। फ़रवरी को छोड़ कर हर महीने को ३० और ३१ दिनों में बाटा गया। लीप वर्ष में फ़रवरी का महीना २६ दिन का होता है। जूलियन कलेंडर की औसत लम्बाई ३६५.२५ दिन थी। यह खगोलीय वर्ष से ११ मिनट १४ सेकेण्ड अधिक था। यह ग़लती समय बीतने के साथ दिखाई देने लगी। फलस्वरूप १५८२ ई. तक आते आते जूलियन कलेंडर खगोलीय वर्ष से १० दिन आगे हो गया। इस समस्या का हल निकालने के लिए ५ अक्टूबर १५८२ को १५ अक्टूबर १५८२ कर दिया गया। इसी प्रणाली को रोमन कैथोलिक देशों ने स्वीकार किया। जबकि प्रोटेस्टेंट देशों ने इसे १७०० ई. तक स्वीकार नहीं किया। ब्रिटेन ने इसे १७५२ मे अपनाया। जबकि रूस ने इसे १९१८ तक अपनाए रखा। ४०० से विभाजित होने वाले शताब्दी वर्ष ही लीप वर्ष होंगे। जूलियन कलेंडर में होने वाली ग़लती से बचने के लिए ऐसा किया गया। ग्रीगेरियन प्रणाली में हर साल में ०.०००५ दिन की त्रुटि रह जाती है। अतः इसमें कई वर्षों तक सुधार की आवश्यकता नहीं होती। शायद इसमें अगला सुधार ४००० ई. तक करने की जरूरत पड़े, जो लीप वर्ष न हो।

कलेंडर बनाने की प्रक्रिया में महीनों, दिनों और सप्ताह के नाम बड़े दिलचस्प हैं। कई नाम देवताओं के नाम पर रखे गए हैं। जनवरी माह का नामांकरण मार्ग के देवता जानुस के नाम पर किया गया है। फ़रवरी महीने का नामांकरण शुद्धिकरण के देवता के रोमन उत्वस फ्रेबुआ पर किया गया (लीप वर्ष में यह महीना २६ दिन का होता है; सामान्यतः २८ दिन का)। ३१ दिवसीय महीना मार्च का नाम मार्स के नाम पर रखा गया जबकि ग्रीक देवता एफ्रोडाइट के नाम पर अप्रैल माह का नामांकरण किया गया। माइया देवता के नाम पर मई व जूनो देवता के नाम पर जून माह का नाम रखा गया। स्कूल खुलने वाले महीने जुलाई का नामांकरण जूलियस सीज़र के नाम पर किया गया। अगस्त का नाम आते ही मन बरसात की फुहारों के अहसास से रोमांचित हो उठता है। इस माह का नामांकरण रोमन सम्राट आगस्टम के नाम पर किया गया है। सितंबर महीने का नाम लेटिन शब्द सेप्टम के नाम पर व अक्टूबर का नाम लेटिन शब्द आक्टो के नाम पर रखा गया। लेटिन शब्द नोवेम से नवम्बर और लेटिन शब्द डेसेम से दिसम्बर का नाम पड़ा।

सप्ताह के अंर्तगत आने वाले सात दिनों का नामांकरण भी बड़े ही दिलचस्प तरीक़े से किया गया है। सैटरडे यानी शनिवार को छोड़कर दिनों के नाम नार्स पौराणिक कथाओं से लिए गए हैं। सूर्य भगवान के नाम पर सनडे यानी रविवार का नाम पड़ा। जबकि मनडे यानी सोमवार का नाम चंद्रमा के नाम पर पड़ा। एंग्लोसैकसन देवता ट्यू के नाम पर ट्यज़डे यानी मंगलवार का नामांकरण किया गया। एंग्लोसैक्सन देवता वोडेन के नाम पर वेडनैसडे का नामांकरण किया गया। इन्हें युद्ध का देवता भी कहा जाता है। गर्जना के नार्दिक देवता थोरे के नाम पर थर्सडे व प्रेम की नार्दिक देवी फ्रिजा के नाम पर फ़ाइडे का नाम पड़ा। कृषि और उपज के दवता सैटर्न के नाम पर सैटरडे का नाम रखा गया। इसके अतिरिक्त कलेंडर से जुड़े कई और भी पहलू हैं। अंग्रेज़ी कलेंडर के अनुसार भारत में अप्रैल से मार्च तक वित्त वर्ष होता है। जबकि हिंदू पंचाग के अनुसार चैत्र (मार्च-अप्रैल) नया वर्ष शुरू होता है। इस तरह कलेंडर की यात्रा बड़ी रोमांचित है।

● **चिप्रेस**

नोटः इस सामग्री का उपयोग होने पर प्रकाशित कतरन कृपया अवश्य भेजें ।

* *जयकान्त कुमार* कक्षा ६ का छात्र हैं और दिल्ली के बदरपुर क्षेत्र का रहने वाला है।

फूलों की अनोखी दुनियां

❑ *अरविंद वर्मा*

फूल प्रकृति की एक अनमोल धरोहर है। फूलों के अलग अलग रंग और ख़ुशबू न सिर्फ़ वसुंधरा का श्रृंगार करते हैं, बल्कि मानव जाति को संदेश भी देते हैं। उदाहरण के लिए गुलाब का लाल फूल प्रेम का प्रतीक होता है; वहीं पीला गुलाब मित्रता का। सफ़ेद गुलाब शांति का संदेश वाहक है। तरह-तरह के फूल और उनके अलग-अलग रंग, ख़ुशबू व आकार हमें बरबस आकर्षित करते हैं। फूलों को लेकर एक तरफ़ जहां शायरों ने न जाने कितनी ग़ज़लें लिखी हैं, वही कवियों ने इन्हें अपनी कविता की विषय वस्तु बनाया है।

कुछ फूलों की बनावट कीड़ों-मकोड़ो की तरह होती है। फूलों के पराग संचयन से फल बनते हैं और फलों से बीज। इस तरह फूल अपना वंश चलाते हैं। फूलों की दुनियां भी बड़ी रोचक है। दुनिया का सबसे बड़ा फूल रैफ़लीसिया है। चितकबरे नारंगी भूरे रंग का यह फूल दक्षिण-पूर्वी एशिया के जंगलों में पाया जाता है। इसका नाम सिंगापुर के संस्थापक सर टॉमस स्टैम्फ़र्ड बिंगले रेफल्स के नाम पर रखा गया था। लगभग ७ किलो तक के वज़न वाले इस फूल का व्यास तीन फुट तक का होता है। इस फूल को स्टिंकिंग कार्प्स लिलि यानी सड़ी लाश वाली कुमुदनी भी कहते हैं। इसमें से सड़ी बदबू आती है। इस फूल का पौधा परजीवी होता है अर्थात यह दूसरे पेड़ों की जड़ों से अपना भोजन लेकर ज़िंदा रहता है। इसके पौधे में पत्तियां नहीं होतीं।

दुनियां का सबसे छोटा फूल अमरीकी पौधे गेलिनसोगा पार्विफ़्लोरा को माना जाता है। इसके फूल लगभग एक मिमी लम्बे होते हैं। इस फूल का रंग सफ़ेद होता है। कुछ नई जानकारी के अनुसार पश्चिम भारत में पिली माइक्रोफ़ाइला व्यास के अनुसार सबसे छोटा फूल माना जाता है। इस फूल का व्यास ०.३५ मिमी होता है। इसके अतिरक्ति कुछ और भी फूल हैं जो अपने आप में बहुत ही विचित्र हैं। जैसे सफ़ेद गेंदे का फूल बड़ी मुश्किल से मिलता है। इस फूल को सन् १९४५ में अमेरिका की बर्पी कम्पनी ने २० हज़ार डॉलर का पुरास्कार दिया था। यह पुरस्कार एलिसवाक को दिया गया था। इसी तरह धीमी गति से फूलने वाले फूलों में पुयु रेमोण्डी का पौधा है। इस पौधे में लगभग १५० साल के बाद फूल आने शुरू होते हैं। कुछ फूलों का आकार भी विचित्र होता है। जैसे डुवालियां नामक फूल का आकार स्टार मछली से मिलता जुलता होता है। वहीं शूटिंग स्टार नामक फूल देखने में ऐसा लगता है जैसे आसतान से तारे गिर रहे हो।

फूलों का खिलना अलग-अलग ऋतुओं के आने का संकेत भी देता है। सामान्यतः ३-४ रंगों में पाए जाने वाले गुलाब के फूल की क़लमों को जोड़कर १८ रंगों के गुलाब विकसित किए जा सकते हैं। गुलाब का जैव वैज्ञानिक नाम 'गोसा' है। ग्रीष्म ऋतु में गुड़हल के मनमोहक फूल खिलते हैं। सूरजमुखी के फूलों की ख़ासियत है कि जिधर सूरज की किरणें जाती हैं पीले रंग और काले पराग वाले इस बड़े फूल का मुख भी उधर की तरफ़ ही होता जाता है। इसलिए इसे सूरजमुखी कहते हैं। रात की रानी व हर श्रृंगार तथा चमेली व मोंगरा के फूल जहां भी होते हैं वातावरण को सुगंधित बनाकर रखते हैं। फूलों से इत्र व दवाएं भी बनती हैं। साथ ही मधुमक्खियां इसके पराग से मधु संचयन करती हैं।

किसी शायर के लफ़्ज़ों में फूल की अहमियत को समझा जा सकता है::

"अगर वो फूल था तो अपना सच समझा गया होगा, जिन हाथों ने मसला होगा उन्हें महका गया होगा।"

● **चिप्रेस**

नोटः इस सामग्री का उपयोग होने पर प्रकाशित कतरन कृपया अवश्य भेजें । फोटो के लिए कृपया ई-मेल पर संपर्क करें ।

* *अरविंद वर्मा* दिल्ली के संगम विहार के रहने वाले हैं और ९वीं कक्षा के छात्र हैं।

मैं पत्रकार बनना चाहती हूँ

❑ *प्रियंका*

राजधानी दिल्ली के समीपवर्ती नोएडा में हाल ही में बच्चों के साथ दुष्कृत्य कर उनकी निर्मम हत्या की घटना ने सभी को झकझोर दिया। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि इस घटना को उजागर करने में मीडिया ने अपनी अहम भूमिका निभाई। बच्चों के लगातार ग़ायब होने की रिपोर्ट लिखाने के लिए उनके मां-बाप लगातार थाने के चक्कर काटते रहे, लेकिन पुलिस प्रशासन ने कोई सुनवाई नहीं की। जब मीडिया ने इस घटना में रुचि दिखाई तो पुलिस हरकत में आई और गुनाहगारों को गिरफ़्तार किया गया। मीडिया जब ग़रीबों की आवाज़ बना तो शासन द्वारा मृतक व लापता बच्चों के अभिभावकों को पांच-पांच लाख रुपये के चेक दिए गए। इस घटना से जुड़े दो अभियुक्तों को सज़ा भी मिली और बच्चों से संबंधित इस तरह के मामलों को लेकर न सिर्फ़ उत्तर प्रदेश सरकार बल्कि देश के अन्य राज्यों की सरकारों पर भी दबाव बना।

मेरे कहने का मतलब है कि मीडिया द्वारा आज सच्चाई की जो लड़ाई लड़ी जा रही है उसे देखकर भला किस संवेदनशील व्यक्ति का मन नहीं करेगा कि वह भी पत्रकार बने। और यही मन मेरा भी है। आज मीडिया अपने विभिन्न माध्यमों जैसे टी. वी. चैनल, अख़बार, पत्रिकाओं, इंटरनेट तथा रेडियो के ज़रिये सच्चाई की लड़ाई लड़ रहा है। वह स्टिंग ऑपरेशन जैसे माध्यमों का सहारा लेकर समाज के तथाकथित रहनुमाओं की असलियत को सामने ला रहा है। शायद इसीलिए इसे लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ कहा जाता है। मैं एक अख़बार की पत्रकार बनना चाहती हूँ क्योंकि मुझे लगता है कि अख़बार की पहुंच और प्रभाव आज भी ज़्यादा से ज़्यादा लोगों तक है।

● चिप्रेस

नोटः इस सामग्री का उपयोग होने पर प्रकाशित कतरन कृपया अवश्य भेजें ।

* *प्रियंका* दिल्ली के बदरपुर क्षेत्र की रहने वाली हैं और कक्षा ६ की छात्रा हैं।

वक़्त से पहले फूला बुरांस और काफ़ल

❑ *लक्ष्मी नौटियाल*

ग्लोबल वार्मिंग का असर हिमालयी क्षेत्र के मौसम पर भी व्यापक असर डाल रहा है। यहां समय से वर्षा न होने के कारण संरक्षित जलीय भंडार ग्लेशियर पर असर दिख ही रहा है, साथ ही यहां की अकूत जैव-विविधता पर भी इसका असर दिखायी देने लगा है। उत्तराखण्ड में अप्रैल-मई में फूलने वाले संरक्षित प्रजाति के बुरांस और काफ़ल जनवरी के तीसरे सप्ताह में ही फूलों से लद गए। काफ़ल के फल तो काफ़ी बड़े हो गए हैं। वहीं समुद्र तल से लगभग ६ हज़ार फ़ीट ऊँचाई वाले जंगलो में भी बुरांस के फूल खिले हुए हैं। इस वर्ष २६ जनवरी को स्टेट बैंक की गैरसैंण शाखा में ध्वाजारोहण के दौरान बुरांस के फूलों का उपयोग चर्चा का विषय रहा।

गत तीन वर्षों में मौसम में आए परिवर्तन को देखें तो बुरांस २००४ के मार्च महीने के दूसरे सप्ताह में फूलने लगा था। वर्ष २००५ में मौसम की बेरुख़ी के चलते फ़रवरी के अंतिम सप्ताह और २००६ में फ़रवरी और अप्रैल में दो बार बुरांस खिला। मगर दोनों बार पूरी तरह खिलने से पहले ही मुरझा गया। वैसे हर वर्ष बेमौसम खिल रहे बुरांस के फूल का आकार घटता जा रहा है। और इसकी फलियां भी नहीं बन पा रही हैं। समय पर वर्षा न होने से बढ़ रही गर्मी से गैरसैंण के भराड़ीसैंण इलाक़े में बुरांस खिल रहा है। जंगलों में मई माह में पकने वाले काफ़ल के फल अभी से पकने की तैयारी में हैं। साल भर हरा रहने वाला बुरांस इस वर्ष पीले पत्तों से लदा हुआ दिख रहा है।

उल्लेखनीय है कि भारत में ४५ हज़ार वनस्पतियों में २५ हज़ार प्रजातियां सिर्फ़ उत्तराखण्ड में हैं जिसमें २१४ प्रजातियों को संकटग्रस्त श्रेणी में रखा गया है। इन्हें १६७४ में संरक्षित वृक्ष घोषित किया गया है। उत्तराखण्ड सरकार ने बुरांस की महत्ता प्रतिपादित करते हुए इसे राजकीय वृक्ष घाषित किया है। बुरांस का वानस्पतिक नाम रृहोडोडेन्ड्रॉन अरेबियन है। यह फूल उत्तराखण्ड में ४ से ६ हजार फ़ीट ऊँचाई पर पाया जाता है। यहां मौसम काफ़ी सर्द होता है। इस ऊँचाई पर मार्च महीने तक बर्फ़बारी की संभावनाएं रहती हैं; लेकिन मौसम में बढ़ी गर्मी का असर बुरांस और माफ़ल पर ही नहीं हुआ है बल्कि कई और प्रजातियां भी इससे प्रभावित हैं।

औषधीय गुणों से भरपूर होने के कारण बुरांस के फूलों और काफ़ल के फलों से स्थानीय लोग जूस बनाते रहे हैं। हृदय रोग में लाभकारी बुरांस जूस का गत कुछ वर्षों से बड़े पैमाने पर उत्पादन होने लगा था। कई स्व सहायता समूह तो सिर्फ़ बुरांस के फूलों का जूस बनाकर ही अपनी आजीविका चला रहे थे। मौसम की बेरुख़ी की मार उनकी आजीविका पर भी पड़ी है। मौसम की इस बेरुख़ी की मार उत्तराखण्ड या हिमालयी समाज के लिए ही नहीं अपितु पूरे देश को झेलनी पड़ सकती है। इसे इन तथ्यों से समझा जा सकता है कि दुनियां के १४० देशों में सिर्फ़ ३ करोड़ वर्ग किलोमीटर में पहाड़ हैं जो पृथ्वी के कुल भूभाग का कुल २० फ़ीसदी होने के बावजूद दुनियां की ५० प्रतिशत आबादी की प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भरता को पूरा करते हैं।

इसी तरह भारत की आधी आबादी की निर्भरता किसी न किसी तरह हिमालयी जंगलों पर है। यहां मौसम के प्रभाव के कारण तेज़ी से आ रहे परिवर्तन भी उतनी ही चिंता का विषय हैं।

● चिप्रेस

नोटः इस सामग्री का उपयोग होने पर प्रकाशित कतरन कृपया अवश्य भेजें । फोटो के लिए कृपया ई-मेल पर संपर्क करें ।

* *लक्ष्मी नौटियाल* उत्तराखण्ड के गैरसैंण की रहने वाली है और कक्षा १२ की छात्रा है।